ੴ वाहिगुरू जी की फतहि ॥
254
भाई
नंद लाल सिंघ जी
सिख मिशनरी कालेज (रजि:)
लुधियाना
6

☬ ੧ੴ वाहिगुरू जी की फतेह॥ ☬

भाई
नंद लाल सिंघ जी

प्रकाशक

सिख मिशनरी कॉलेज (रजिः)

1051, कूचा 14, फील्ड गंज, लुधियाना - 141008, फोन : 663452
दिल्ली सब आफिस : A-143, फतहि नगर, नई दिल्ली - 110 018, फोन-5135677
जालन्धर सब आफिस : W.G.-578, सुराज गंज, जालन्धर-144001, फोन : 236947

भाई नंद लाल सिंघ जी

अकालपुरख, अनाशवान एकीश्वर द्वारा संस्थापित गुरू गोबिंद सिंघ जी के विलक्षण व्यक्तित्व की - अपनी-अपनी सीमित मानव बुद्धि के अनुसार समकालीन तथा बाद के इतिहासकारों, पराधर्मियों, आलोचकों, कवियों व श्रद्धालुओं द्वारा समय-समय पर - विवेचना करने के यत्न होते आए हैं । यदि एक ने गुरू जी को अगम्य मर्द और *आपे गुर चेला* के नाम से संबोधित कर सम्मानित किया है तो दूसरे ने उन्हें *सरबंसदानी*, अद्वितीय योद्धा, धर्म रक्षक व उपकारी कह कर उनका गुणगान किया है । यदि कुछेक ने उन्हें पाखंड प्रहारक, संत सिपाही व पंथ का *वाली* व संरक्षक कह कर उनकी पूजा की है तो औरों ने उन्हें महान कवि, खालसा की सृजना करने वाला महान निर्माता और एक अकाल पुरख का पुजारी कह कर नमस्कार किया है । परंतु दसमेश जी के बारे में ये सारे दृश्य चित्रण अधूरे ही लगेंगे यदि इनमें गुरू साहिब के हजूरी कवि (दरबारी कवि) व उनके अनन्य सिख, आशिक सादिक - भाई नंद लाल सिंघ जी द्वारा विस्मय की अवस्था में आकर खींची गई तस्वीर को शामिल न किया जाए ।

शब्दों के द्वारा रेखांकित की गई भावों की इस अलौकिक चित्रकारी के कमाल का राज़ क्या था? यह जानने के लिए हमें भाई साहिब की इस रचना व उनके जीवन पर एक दृष्टि डालनी होगी ।

भाई नंद लाल जी के पूर्वजों के असली वतन के बारे में इस समय निश्चित तौर पर नहीं कहा जा सकता । इतिहासिक पुस्तकों और खानदानी रवायतें इसके बारे में हमारी कोई सहायता नहीं करतीं । पर संकट के समय, पनाह लेने के लिए आप का पंजाब में आ कर गुरू गोबिंद सिंघ जी की शरण में पहुंचना इस बात की, किसी सीमा तक पुष्टि करता है कि आप के खानदान के पंजाब देश और सिख गुरूओं के संग पहले से ही संबंध थे जिनके प्रति श्रद्धा ने भाई नंद लाल जी को अपनी जान, माल, धर्म व ईमान सब कुछ उनके हवाले करने की प्रेरणा की ।

अनुवादक : स. कुलबीर सिंघ / अप्रै. 2000

भाई नंद लाल के पिता छज्जू मल फारसी और अरबी के अच्छे विद्वान मालूम होते हैं । चुगत्तियां के राज्य में विद्वता और निजी योग्यता ही ऐसे साध न थे जिन से कोई गैर-मुसलमान या हिंदू, बादशाही दफ्तर में अहिलकार बन सकता था । शाहजहान के समय में मुंशी छज्जू मल रोज़गार की खोज में दिल्ली पहुंचे और शाही मुंशीखाने में नौकर हो गए । दिल्ली, उस समय मुगलों की राजधानी थी । यहां पर मुंशी छज्जू मल का मिलाप शहज़ादा दारा शुकोह से हो गया । दारा, संस्कृत भाषा और भारतीय विद्या का एक अच्छा पंडित था और हिंदू विद्वानों की बहुत कदर करता था । उसके अपने लेखन व उस की निगरानी में या उस की इच्छा के अनुसार तैयार हुए संस्कृत के ग्रंथों के फारसी अनुवाद इस बात की जिंदा मिसाल हैं ।

मुंशी छज्जू मल की विद्वता और ईमानदारी ने शहज़ादा दारा शुकोह के दिल में ऐसा स्थान बना लिया था कि जब बादशाह शाह जहान ने 1639 ई में शाहज़ादे को कंधार की पहली लड़ाई पर भेजा तो वह छज्जू मल को अपना मीर मुंशी बना कर साथ ले गया । यहां आ कर मुंशी छज्जू मल दीवान की पदवी पर नियुक्त हो गए और बहुत से आर्थिक, वित्तीय, प्रबंधकीय व फौजी मामले भी उनके हवाले हो गए । शाहज़ादा तो जल्द ही कंधार से वापिस आ गया पर मुंशी छज्जू मल वहीं पर टिके रहे और वहीं पर 1652 ई के आसपास उनका देहांत हो गया ।

इच्छा ईश्वर की, मुंशी छज्जू मल के घर, यौवन में कोई संतान जिंदा नहीं रहतीं थी । बच्चे छोटी उम्र में ही मर जाते थे । पचास साल की आयु तक उनकी कोई भी संतान जिंदा नहीं रह सकी । इसलिए जब ढलती उम्र में उनके घर नंद लाल का जन्म हुआ तो कोई खास खुशी नहीं मनाई गई । नंद लाल की जन्म तिथि, व जन्म स्थान के बारे में कहीं से भी कोई विश्वस्त सूचना प्राप्त नहीं हो सकी । खानदानी कागज़ात न रहने के कारण इनकी वंश में से भाई मेघराज और भाई राम दयाल ने भी अपनी रचनाओं में इस बारे चर्चा नहीं की । हां, श्री परमानंद अरोड़ा, एम. ए. ने अपने एक लेख - *भाई नंद लाल की जीवनी और रचना* में उनके जन्म की तारीख 1633 ई और स्थान गज़नी बताया है ।

जब नंद लाल उस आयु वर्ग में से निकल गए जिस आयु वर्ग में दीवान छज्जू मल के बच्चे अक्सर मर जाते थे, तो उनके पिता ने उनकी शिक्षा-दीक्षा और लालन-पालन का उचित प्रबंध करना आरंभ कर दिया । एक अरबी-फारसी का विद्वान उनको पढ़ाने पर लगा दिया गया और दीवान छज्जू मल स्वयं भी खासा समय पुत्र की विद्या की देख भाल पर लगाते । नंद लाल एक होनहार और परिश्रमी बालक था । जल्द ही पढ़ लिख कर बुद्धिमान हो गया । गद्य तथा पद्य का उसको खास शौक था । इनमें उसने बहुत निपुणता प्राप्त कर ली ।

दीवान छज्जू मल रामानंदी वैष्णव बैरागियों का चेला था । पर ऐसा मालूम होता है जैसे कि नंद लाल पर बचपन से ही सिख मत का प्रभाव पड़ चुका था । गुरू नानक साहिब के समय से ही अफगानिस्तान में सिख संगत मौजूद थी और काबुल, गज़नी और कंधार में सिख धर्मशालाएं (गुरद्वारे) स्थापित हो चुके थे जहां पर संगत सुबह व शाम को एकत्र हो कर शबद कीर्तन करती और गुरमत की विचार भी किया करती थी । *दबिस्तानि मज़ाहिब* के कर्ता के कथनानुसार उत्तरी भारत और अफगानिस्तान में ऐसे बहुत थोड़े शहर थे जहां तब सिख नहीं बसते थे । यह सतारहवीं शताब्दी के बीच की बात है । अफगानिस्तान और इराक में सिख आम तौर पर घोड़ों का व्यापार करते थे । इस तरह एक खांनदानी रवायत के अनुसार गुरमत के प्रभाव में भाई नंद लाल ने अपने पिता के बार-बार कहने पर भी, बैरागी गुरुओं से दीक्षा लेने और कंठी धारण करने से इनकार कर दिया था और इच्छा प्रकट की थी कि उस को ऐसी माला पहनाई जाय जो जीवन का सुख-चैन लाने में सहायक हो और कभी न टूटे । यह घटना गुरू नानक जी की पंडित हरि दयाल के हाथों जनेऊ धारण करने से इनकार करने वाली साखी से मिलती जुलती है । नंद लाल की आयु उस समय 16 वर्ष की होगी, जब कि उस की माता गुजर गई । दो साल के बाद पिता का साया भी सिर से जाता रहा । लाला परमानंद ने अपने लेख में दीवान छज्जू मल की मृत्यु 1652 में हुई बताई है जो हो सकता है ठीक ही हो । इस तरह यतीम हो जाने के कारण भाई नंद लाल के सिर पर मुसीबत के पहाड़ टूट पड़े । आम रिवाज के अनुसार भाई नंद लाल ने करुणा आधार पर अपने पिता

के स्थान पर पदवी लेने के लिए यत्न भी किया पर उनके पिता का मेहरबान शाहज़ादा दारा शुकोह गज़नी से जा चुका था(और कंधार की तीसरी जंग का, जो फरवरी 1653 ई में लगी, नंद लाल को पता नहीं होगा)। नया हाकिम दीवान छज्जू मल की सेवा और भाई नंद लाल की विद्वता से वाकिफ नहीं था जिस के कारण उसने इनकी ओर कोई विशेष ध्यान नहीं दिया और नंद लाल को एक नए व्यक्ति की तरह एक साधारण मुंशी की पदवी पेश की, पर भाई नंद लाल के स्वाभिमान ने ऐसे छोटे पद को स्वीकार करने से मना कर दिया जहां पर उसके पिता राज दरबार के एक मुखी रह चुके थे । उनके और दो छोटे भाई थे जिनकी देखभाल की जिम्मेवारी भी उनके कंधों पर ही थी । नंद लाल ने महसूस किया कि वे अब गज़नी शहर में अपनी खानदानी रवायतों को कायम नहीं रख पाएंगे, इसलिए उंन का वहां पर रहना कठिन होगा । इस पर उन्होंने हिंदुस्तान आने का मन बना लिया ।

गज़नी में भाई नंद लाल के पिता दीवान छज्जू मल काफी रूपया पैसा और जायदाद छोड़ गए थे । पर धन-संपत्ति बिखरी हुई थी । इसलिए इन्होंने अपनी सारी संपत्ति को बेच कर नकदी में बदल लिया और अपने दोनों भाइयों और दो अफगान नौकरों सहित मुल्तान को जाने वाले काफिले में शामिल हो गए । मुल्तान, चिरकाल से भारत के प्रसिद्ध शहरों में से था । यह प्रसिद्धि केवल राजनीतिक या धार्मिक बातों के कारण ही नहीं थी बल्कि इसके लिए भी कि मुलतान, अफगानिस्तान, ईरान बलोचिस्तान और हिंदुस्तान में एक बड़ा व्यापारिक केंद्र बन चुका था । इसलिए यह शहर पंजाब और दिल्ली के व्यापारियों का एक बड़ा टिकाना था ।

जब भाई नंद लाल का काफिला यहां पहुंचा और शहर के धनाढ्य हिंदू क्षत्रियों के साथ आप का मेल मिलाप बढ़ने लगा तो आपने यहीं पर टिक जाने का फैसला कर लिया । दिल्ली दरवाजे के बाहर कुछ अमीर क्षत्रियों के घर थे । भाई नंद लाल ने वहीं पड़ोस में एक मकान ले कर रहना शुरू कर दिया और अपने मकान बना लिए । धीरे-धीरे और लोग भी वहां पर आ कर बसने लग गए और वहां पर एक अच्छा खासा मोहल्ला बन गया । यहीं पर आप का विवाह हो गया । आपका सुसराल, गुरू घर का श्रद्धालु था ।

आप की पत्नी, गुरू घर की श्रद्धालु होने के कारण नित्यप्रति

अमृतबेला में श्री गुरू नानक देव जी की बाणी पढ़ती, जिस से भाई साहिब के मन में सिखी के प्रति प्रीति पैदा हुई । दिनो दिन गुरबाणी पर विश्वास परिपक्व होता गया जिस से दिल को गहरा सुख, शांति और सकून प्राप्त हुआ। गुरमुखी अक्षर पढ़े और बहुत सी बाणी कंठ कर ली । गुरबाणी व गुर इतिहास के अध्ययन ने बुद्धि और अनुभव को और मांजा, संवारा और चमकाया । आपने इस समय यहां *तौसीफो सॅना* आदि कुछ पुस्तकों की रचना की और विद्या के जिज्ञासु सज्जनों को *संथा* यानी ज्ञान-अभ्यास करवाने की सेवा भी जारी रखी ।

भाई नंद लाल के अफगान नौकर जो आप के साथ ही गज़नी से आए थे, और यहां पर आपके पास ही ठहर गए थे, भाई साहिब को *आगा*(आका) कह कर पुकारते थे । इसलिए मुलतान में आप *आगा* के नाम से मशहूर हो गए और उनके नाम से ही यह नई आबादी भी आगापुरा के नाम से मशहूर हो गई । **सर एडवर्ड मैकलेगन** का विचार है कि भाई नंद लाल के आने से, ढेर समय पहले से ही यहां पर मुगल आगाओं और अमीरों के घर होने के कारण यह आबादी आगापुरा कहलाती थी । पर यह विचार मान्य नहीं । पहली बात तो यह कि मुगलों को आगा कोई नहीं पुकारता था और दूसरी बात यह कि शब्द *पुरा* हिंदी बोली का है । भाई मेघ राज अपनी रचना *प्रेम फुलवाड़ी* में लिखते हैं कि इस स्थान को पहले *अगंमपुरा* कहते थे, जो बिगड़ कर *आगापुरा* बन गया । कुछ भी हो, जब तक कोई विशेष इतिहासिक गवाही न हो, इस नाम का असली कारण छिपा ही रहेगा ।

लाला परमानंद अपने लेख 'भाई नंद लाल की जीवनी और रचना' में लिखते हैं कि मुंशी नंद लाल की रचना *दस्तूररुलइनशा* मुल्तान और पंजाब की तारीख का एक कीमती खज़ाना है । उस समय की घटनाओं के बारे में जो जानकारी इस में मिलती है वह और कहीं नहीं मिलती । यह रचना न केवल देश के राजनीतिक और सामाजिक मामलों पर ही प्रकाश डालती है, बल्कि भाई साहिब के जीवन के उतार-चढ़ाव का भी हूबहू नक्शा हमारे सामने पेश करती है कि वह किस तरह 1652 ई में फारसी अरबी में अपनी बुद्धिमता और प्रवीणता के आधार पर मुल्तान के हाकिम नवाब वसाफ खान के दफतर में मुंशी के पद पर नियुक्त हुए । नवाब साहिब काफी समय से

उनके पिता दीवान छज्जू मल को जानते थे । पर आपके पास जो सब से बड़ी सिफारिश थी वह थी आपकी ईमानदारी और मेहनत, जिस के कारण आप जल्द ही मीर मुंशी की पदवी पर पहुंच गए । बाद में आप भक्कर के किलेदार और फौजदार भी बना दिए गए जहां पर आप के नाम पर इलाके के जिमींदारों द्वारा पांच हजार रुपया पेशगी या कर्जे के तौर पर जमा कर के भेजने का परवाना जारी हुआ । इस पर आपने यथाशक्ति अमल कर दिया। इसके पश्चात आपको दीना कहिरोड़, फतिहपुर और परगना महीउद्दीन पुर का नाज़िम नियुक्त कर दिया गया । पर सब से बड़ी पदवी जिस पर आप नियुक्त हुए वह थी मुल्तान की नायब सूबेदारी । *दस्तूरुल-इन्शा* में इस बात का कोई पता नहीं लगता कि आप कितना समय तक मुल्तान के नायब सूबेदार रहे ।

लाला परमानंद के अभिलेखों के अनुसार *दस्तूरुल-इन्शा* में भाई नंद लाल की सैनिक सेवाओं के बारे में भी वर्णन है । दर्रा सुल्तान सरवर के आस-पास की पहाड़ियों में शाहू नामी एक डाकू ने लगभग सात हजार की सेना जमा कर रखी थी और उसने मुल्क में अंधेरगर्दी मचाई हुई थी । मुंशी नंद लाल की डयूटी, एक बड़ी सेना ले कर, शाहू डाकू को पार लगाने की लगाई गई । आपने अपनी सेना, बुद्धिमता और बहादुरी के बल पर, वे जौहर दिखलाए कि शाहू डाकू जंग में हार गया और उसके तीन हजार सिपाही रणभूमि में मारे गए । बाकी या तो भाग गए या कहीं छिप-छिपा गए । शाहू स्वयं भी पकड़ा गया । सारे पहाड़ी जमींदारों से नेक चलनी के मुचलके लिए गए कि वह ईरान और दूसरे देशों से आने वाले काफिलों के रास्ते नहीं रोकेंगे। इस से यह आशा बंध गई कि भारत और दूसरे मुल्कों में अच्छे व्यापारिक और राजनीतिक संबंध पैदा हो जाएंगे । इस तरह भाई साहिब भिन्न-भिन्न पदों पर, कोई तीस साल तक सेवा करते रहे । उन को शहज़ादा सलीम और शहज़ादा मुहम्मद अकबर (1678-79) की सेवा करने का सम्मान भी प्राप्त हुआ ।

पर अभी कुदरत को भाई नंद लाल जी के जीवन में एक और बड़ा परिवर्तन लाना था । सम्राट औरंगज़ेब के समय में भाई नंद लाल को किसी कारण नौकरी से जवाब दे दिया गया । संभावित कारण यही प्रतीत होता है

कि उनके पिता दीवान छज्जू मल गज़नी में शहज़ादा दारा शुकोह की नज़रों में चढ़े हुए थे । भाई नंद लाल ने अपनी बहाली के लिए भले ही प्रयास भी किए पर सफल न हो सके । कुछ समय के लिए वे एकांतवास हो गए और अपना अधिकतर समय सिख धर्म की पुस्तकें पढ़ने में लगाते रहे । उस समय गुरगद्दी पर दसवें गुरू, गुरू गोबिंद सिंघ जी बिराजमान थे जिन का दीनदुनी के कामों का सुलझा प्रबंध, उच्च विद्वता, निपुणता और कदर कमाल ने संसार को चकित कर रखा था । सिखों की श्रद्धा नित्यप्रति बढ़ती ही जा रही थी और वे एक नई संगठित कौम के रूप में उठ रहे थे । इनकी दिन-प्रति-दिन बढ़ती जा रही शान और शक्ति के कारण मुगल हकूमत का दिल धड़क रहा था । ईश्वर की कृपा से भाई नंद लाल के दिल में दशम पातशाह के दर्शनों की तड़प पैदा हुई और वह अपने बाल बच्चों - लखपत राय व लीला राम की देख-रेख का उचित प्रबंध करके, मुल्तान से चल कर लाहौर आए । कुछ दिन वहां ठहरने के बाद वे अमृतसर पहुंचे, श्री दरबार साहिब के दर्शन किए और नयनों व सीने में शीतलता का आनंद लिया । फिर वे रास्ते में आने वाले गुरधामों के दर्शन-दीदार करते हुए माखोवाल अनंदपुर पहुंच गए जहां पर गुरू गोबिंद सिंघ जी बिराज रहे थे । बस दर्शन करने थे कि आप ऐसे श्रद्धालु हुए कि नूरी दीदार करके सरशार हो गए । दीक्षा ली और अनन्य सिख की पदवी प्राप्त कर ली ।

प्रीति-रीति के जज़्बों व कौतुकों ने प्रेम मंडल के पर्वत की जिन उच्च चोटियों को यहां छूआ, सिदक, प्यार और प्रीति आकर्षण की दोतरफी प्रीति ने फारसी कविता का रूप धारण करके, गुरू भावना व मुर्शिद व मुरीद की जो अभेदता यहां दर्शाई वह पढ़ने सुनने वाले सिदकवान जिज्ञासुओं पर सदा सिखी सिदक भरोसा और जी-दान की वर्षा करती रहेगी । *गोया* (कहने वाला, गुरू जी की स्तुति करने वाला) जो आप की मोहर छाप थी, तखल्लुस था, के नाम पर लिखा गज़लों का यह *दीवान* अपने अंदाज़ में गुरमत की रमज़ों को उसी तरह खोलने में समर्थ है जैसे भाई गुरदास जी की *वारां* । गुरमत के इन दोनों महान व्याख्याकारों की रचना गुरबाणी के साथ-साथ, एक समान गाई, सुनी और प्रमाण के तौर पर प्रस्तुत की जाती हैं ।

अनंदपुर से आज्ञा ले कर भाई नंद लाल आगरा गए । उन्हीं दिनों में ही शहज़ादा मुअज़म(बहादुर शाह) ने भाई साहिब को अपने पास नौकर रख

लिया प्रतीत होता है, जब कि वह 1695 ई के आरंभ में कैद से रिहा होने पर मई में आगरा का सूबेदार नियुक्त हुआ था । पर कुदरत को भाई साहिब का, बहुत समय आगरा ठहरना भी मंजूर नहीं था । कहते हैं कि एक बार बादशाह औरंगजेब ने इसलामी विद्वानों की सभा में कुरान मजीद की किसी एक आयत के भाव अर्थ पूछे । कइयों ने विस्तार सहित बताने के यत्न किये पर बादशाह की तसल्ली न हुई । शहज़ादा मुअज़म भी वहीं पर उपस्थित था। उसने बादशाह से मोहलत मांगी ताकि वह उस आयत के भावार्थ के बारे में सोच सके । मुहलत के दिनों में शहज़ादे ने अन्य विद्वानों के अलावा भाई नंद लाल जी से भी उस आयत के भावार्थ पूछे । भाई साहिब के बताए अर्थ शहजादे को ठीक लगे और जब उस ने उन का विस्तृत अर्थ बादशाह को बताया तो उस की तसल्ली हो गयी और वह बहुत प्रसन्न हुआ । औरंगज़ेब को जब यह पता चला कि यह अर्थ भाई नंद लाल ने किये हैं तो भाई साहिब को बुलवा कर बड़ा इनाम दिया । बातचीत करते हुए बादशाह ने शहज़ादे को कहा कि हैरानी की बात है कि ऐसा विद्वान और सूझवान, अभी तक इसलाम के घेरे में नहीं आया! भाई नंद लाल, बादशाह की नीयत ताड़ गए । उनके लिए अब दो ही रास्ते थे - या तो मुसलमान हो जायं या फिर कहीं अन्यत्र सुरक्षित स्थान पर चले जाएं । इसलाम धारण करने के बारे में ता उन्होंने कभी स्वपन में भी नहीं सोचा था, क्योंकि वह तो अमर पातशाह, दोनों जहानों के मालिक, जान और दिल के रक्षक, गुरू गोबिंद सिंघ की संगत में शामिल हो चुके थे । उनके इस विश्वास को कोई भय या लालच विचलित नहीं कर सकता था । उनको अपने सच्चे रब्बी सज्जन, गुरू गोबिंद सिंघ पर पूरा विश्वास था । अंततः भाई साहिब ने आनंदपुर पहुंचने का फैसला कर लिया और मौका लगते ही वे आगरा से लाहौर आ गए । यहां पर उनका एक शागिर्द ग़ासुदीन रहता था जो आगरा का दरोगा हुआ करता था और एक महीने की छुट्टी आया हुआ था । वह भाई साहिब को मिला और दोनों अनंदपुर, गुरू गोबिंद सिंघ जी के हजूर जा पहुंचे । कुछ दिनों के बाद ग़ासुदीन तो लाहौर वापिस चला गया, पर भाई नंद लाल जी वहीं अनंदपुर ही ठहर गए ।

पूर्वोक्त घटना के कारण, भाई साहिब का दिल अति वैराग्य-मय था। कलगियों वाले सच्चे पातशाह की महानता, उदारता और अन्य दैवी गुणों का

विलाप करते हुए, अपने गहरे दिल के भावों को कविता का रूप देते गए । प्रभु भक्ति, नाम सुमिरन, नामरंग में रमे और श्रद्धा भावना के अमोलक वचनों को अपनी कविता में पिरोया । श्री अनंदपुर साहिब पहुंचने तक, इस रचना में 514 शेयर लिखे जा चुके थे । भाई साहिब ने इसका नाम *बंदगीनामा* रख कर हजूर के पेश किया परंतु गुरदेव ने संगत में सारे शेयर व इनकी व्याख्या सुनने के उपरांत इसका नाम *जिंदगी नामा* रखा और एक शेयर

आबे हैवां पुर शुदा चूं जामि ऊ ।'बंदगी नामा' शुदा जां नामि ऊ ।।५०२।।

में आए शब्दों *बंदगी नामा* को अपने कर-कमलों से बदल कर *जिंदगी नामा* कर दिया ।

इतिहास में गुरू गोबिंद सिंघ केवल आध्यात्मिक अग्रणी या जंगी जरनैल करके ही प्रसिद्ध नहीं थे । वे अपने समय के एक रूहानी कवि, महान विद्वान व इलम तथा हुनर के बड़े संरक्षक भी थे । उस समय शायद अनंदपुर के अतिरिक्त भारत में और कोई ऐसा स्थान नहीं था जहां एक ही समय पर इतने विद्वान, कवि और साहित्यकार एकत्र हुए हों । पंजाबी, बृज भाषा, फारसी आदि के प्रसिद्ध कवि जिन की संख्या 52 तक दी हुई है, गुरू गोबिंद सिंघ जी के साहित्यक दरबार के रुकन थे । इन्होंने अन्य रचनाओं के अतिरिक्त पंजाबी साहित्य के खजाने को भरपूर करने के लिए भिन्न-भिन्न विधाओं की पुस्तकों के अनुवाद किए । इस संबंध में, जब हम दसम ग्रंथ में दरबारी कवियों के साथ साथ गुरू गोबिंद सिंघ की अपनी रचना की ओर ध्यान आकर्षित करते हैं, तो चकित रह जाते हैं । पिछले सौ सालों से, जिस आध्यात्मिक और धार्मिक लहर के नेता की, मुगलों जैसी जबर्दस्त हकूमत, खून की प्यासी रही हो, जिस नेता के पहले पांच बजुर्गों को हकूमत के अत्याचारों का निशाना बनना पड़ा हो, जिस के पिता, हाकिमों के आदेश से शहीद कर दिए गए हों, जिस के दो मासूम बच्चे गोद-गोद कर मार दिए गए हों, स्थानीय मुगल हाकिम ही नहीं, बल्कि आस-पास के हिंदू राजा भी जिसके दुश्मन रहे हों, जिस को पहली उम्र से ही जान के खतरे की घंटी बजती सुनाई दे रही हो, जिस को धर्म और स्वाभिमान की रक्षा के लिए बीस सालों में चौदह लड़ाइयां लड़नी पड़ी हों और अंततः जिस को चालीस-ब्यालीस

साल की छोटी सी आयु में, अपनी जान तक की आहुति देनी पड़ी हो, उसके द्वारा इतनी उच्च कोटि का साहित्य रच पाना, हैरान कर देने वाला कृश्मा था। पर उससे भी अधिक हैरान करने वाला कृश्मा, जो गुरू गोबिंद सिंघ ने कर दिखलाया था, वह *खालसा* का संकल्प व उस की सृजना, अर्थात सदियों से निरीह और जात पात में बंटी हुई हिंदू कौम की गिरी हुई और नीच जातियों में से अमृतपान करवाकर, एक ऐसी स्वाभिमानी कौमप्रस्त और देश सेवक जमात को पैदा कर देना, जिस ने पचास साठ सालों में ही सात आठ सौ साल के गुलाम हुए पंजाब को स्वतंत्र कर दिखलाया और जल्द ही पंजाब राज्य की सीमाएं, सिंध से ले कर तिब्बत चीन तक और अफगानिस्तान के दरिया से दिल्ली तक पहुंचा दीं। इतना बड़ा पंजाब, जो *खालसा* जी ने अपने समय, 18वीं और 19वीं शताब्दी में स्थापित किया, भारत के इतिहास में न इस से पूर्व कभी था और न बाद में अब तक कभी कायम हुआ है।

सत्य तो यह है कि भौगोलिक और इतिहासिक दृष्टिकोण से पंजाब की एकता और जत्थेबंदी, गुरू गोबिंद सिंघ के खालसा की संपूर्ण भारत को ऐसी देन थी जिस के लिए हम सब को उन का ऋणी होना चाहिए। *खालसा* जी के जन्म उस की चढ़दी कला और ऊंची शान, भाई नंद लाल ने अपनी आंखों से देखी प्रतीत होती है। उन्होंने खालसा की प्रशंसा और उस के कर्तबों का जो चित्र अपनी रचना *तनखाह नामा* के अंत में खींचा है, वह इस की मुंह बोलती तस्वीर है।

भाई साहिब के अमृतपान करके सिंघ सजने के बारे में विद्वानों की राय में अंतर है। परंतु विचार करने वाली बात यह है कि यदि श्री गुरू गोबिंद सिघ जी *भाई डल्ले* जैसे सेवक-सिख को अमृतपान किये बिना अपने समीप *पीढ़ी जितना स्थान* देने में असमर्थता प्रकट करते रहे तो यह कैसे संभव है कि बिना खडे का अमृतपान किए, भाई साहिब को सतगुरू साहिब की इतनी गहन निकटता व विश्वास प्राप्त हो गया हो या ऐसा अनन्य व निकटवर्ती सिख, अमृत जैसी निधि से विरक्त रह गया या रखा गया हो ? याद रहे कि भाई साहिब *रहितनामे* व *तनखाह-नामे* के लिखारी भी हैं। बाबा सुमेर सिंघ ने *गुरू पद प्रेम प्रकाश* में लिखा है कि *सेनापति* जी अमृतपान करके

सेना सिंघ हो गए, परंतु प्रचलित पहला नाम सेनापति ही रहा । यही बात भाई नंद लाल सिंघ के बारे में कही जा सकती है ।

अत: वास्तविकता यही है कि उन्होंने बाकायदा खंडे का अमृतपान किया और उनका नाम-गुरदेव, पांच प्यारों व अन्य सिखों के नामों में परिवर्तन की रीति के अनुसार - भाई नंद लाल से भाई नंद लाल सिंघ रखा गया । हां, गुरदेव जी अधिकतर उनको प्यार से लाला जी करके संबोधित करते रहे । कुछ इतिहासकारों को इस से भी गलतफहमी हुई प्रतीत होती है । इतिहास में विशेष तौर पर इन के द्वारा अमृतपान करने का वर्णन न होने के कारण, यह हो सकता है कि यह बात इतनी सर्वसाधारण व स्वाभाविक थी कि अलग व विशेष तौर पर वर्णन करने की जरूरत किसी को नहीं पड़ी ।

श्री गुरू गोबिंद सिंघ जी की हजूरी में रह कर, सिख धर्म और खालसा की रहित मर्यादा को जिस उच्च स्तर तक भाई साहिब ने समझा और समझाया, वह दूसरे विद्वानों के हिस्से कम ही आया है । इस बात की गवाही भाई साहिब की अपनी रचनाओं से भी मिलती है ।

हम पहले बता चुके हैं कि भाई नंद लाल को शुरू से ही कविता पढ़ने और काव्य रचना का शौक था और विद्या प्राप्ति के दिनों में ही, उन्होंने इस कला में विशेष योग्यता प्राप्त कर ली थी । सिख धर्म की पुस्तकों के अध्ययन से उन की रुचि गुरू-भक्ति और ईश्वरीय-प्रीति की ओर बढ़ गई थी । आनंदपुर के आध्यातिमक और साहित्यक वातावरण में, भाई साहिब की तो काया ही पलट गई । गुरू गोबिंद सिंघ के नूरानी दीदार और इलाही दीक्षा के प्रभाव में, मानो भाई नंद लाल के कपाट खुल गए । मन उल्लास में आ गया । दैवी प्रीति का समुंद्र उफान पर आने लग गया और परिणाम स्वरूप श्रद्धा भरी कविता स्वत: ही उतरने लगी ।

गुरू साहिब ने आप को दीवान की पदवी पर नियुक्त करना चाहा, पर भाई साहिब ने लंगर की सेवा को सर्वश्रेष्ठ सेवा समझा । अनंदपुर में जितने भी डेरे थे, सब में ही लंगर चलते थे । इसी प्रकार भाई साहिब के डेरे में भी लंगर लग गया जहां से जरूरतमंदों को हर समय भोजन मिलता था । लंगर की सेवा के लिए भाई साहिब सदैव स्वयं हाजिर रहते थे । एक बार सिख

संगत की अलग-अलग डेरों के लंगर के बारे में टीका टिप्पणी सुन कर, गुरू साहिब भेस बदल कर सारे डेरों में गए और देखा कि भाई नंद लाल के डेरे में हर समय लंगर तैयार मिलता है और उनके पास जो कुछ भी हाजिर होता है, वे हाथ ज़ोड़ कर विनम्रता से आगे रख देते हैं।

भाई नंद लाल को जब अनंदपुर रहते हुए कुछ समय हो गया तो मुल्तान से उन के बाल बच्चों की कुशलता की खबर ले कर एक हरकारा पहुचा । जब गुरू साहिब को उनके घर-परिवार और बच्चों के बारे में पता लगा कि वे मुल्तान में अपने ननिहाल में रहते हैं तो आपने भाई साहिब को कहा कि यदि उनको स्वीकार्य हो तो उनके बच्चों को आदर सम्मान देने के बारे में, वे सिख संगत को हुकमनामे लिख भेजें और यह भी आज्ञा कर भेजें कि जो भेंट उनके बाल बच्चों को की जाएगी, वह भी इस दरबार में स्वीकार हुई समझी जाएगी । पर भाई साहिब ने सम्मान सहित विनती की कि वह और उनका खानदान, काफी समय से नौकरीपेशा रहे हैं और शहज़ादों व नवाबों के दीवान रह चुके हैं और आप की कृपा से अच्छा भला गुजारा चल रहा है । भेंट लेने से मुफ्त खाने की आदत पड़ जाएगी जिस से, बल्कि मेरी औलाद को बचाया जाए । आप आशीष और शक्ति प्रदान करो कि मेरा खानदान नेक कमाई करता रहे । गुरू साहिब यह सुन कर अति प्रसन्न हुए और कहा : धन्न भाई साहिब, धन्न भाई नंद लाल ।

उन्हीं दिनों में 1697 ई के लगभग एक और कवि तथा विद्वान, कंवर सैन सपुत्र केशव दास बुंदेलखंडी, औरंगज़ेब बादशाह के डर का मारा गुरू गोबिंद सिंघ जी की शरण में आ गया । गुरू साहिब ने उस को भी अपने दरबारी रुकनों में शामिल कर लिया और अच्छा वेतन दिया । इस तरह अनंदपुर में भाई नंद लाल के समय, कवियों व विद्वानों का एक बड़ा समूह जमा हो गया जो गुरू साहिब के संरक्षण का लाभ उठा रही थी । गुरू साहिब की छत्रछाया में उनको भरपूर सम्मान प्राप्त था । पर जो प्रीति और श्रद्धा, भाई नंद लाल के दिल में श्री गुरू गोबिंद सिंघ और सिख धर्म की आत्मिक शिक्षा के लिए उत्पन्न हो चुकी थी, जिस तरह वे गुरमत और खालसा के आंतरिक भाव को समझ सके थे, तुलना में वह अन्य विद्वानों को कम नसीब हुई । इस बात की साक्षी भाई साहिब की रचनाओं में से प्रत्यक्ष मिलती है

जो आप के भावों का मूल प्रतिनिधित्व करती हैं । गुरू साहिब की भी आप पर अनंत कृपा थी । वे उन को भाई साहिब कह कर संबोधित करते थे और भाई साहिब की रचनाओं की कथा, आम तौर पर दरबार में हुआ करती थी । संगत की शंकाओं का समाधान करने के लिए भी आप को ही कहा जाता था । अब तक भी सिख गुरद्वारों में और खास करके श्री दरबार साहिब अमृतसर में, गुरबाणी और भाई गुरदास जी की रचना के अतिरिक्त, केवल भाई नंद लाल की रचना का कीर्तन करने की ही आज्ञा है । सिख संसार में यह एक बेमिसाल सम्मान और गौरव है जो कि भाई गुरदास जी के बाद, केवल भाई नंद लाल जी को ही नसीब हो सका है ।

भाई नंद लाल, दिसंबर 1705 ई तक गुरू गोबिंद सिंघ जी के दरबार में अनंदपुर ही ठहरे रहे । ऐसा प्रतीत होता है कि जब अनंदपुर को शत्रु द्वारा घेर लिया गया था तो गुरू साहिब को अपना निवास स्थान छोड़ना पड़ा और सरसा नदी के किनारे पर सारा परिवार बिछुड़ गया व सिख, अलग-थलग हो गए । उस समय भाई साहिब भी कहीं बिछुड़ गए । इसके पश्चात सन 1706 में आप कहां रहे, इस बारे में कुछ पता नहीं चलता । हां इतना मालूम होता है कि सन 1707 ई में, बादशाह औरंगज़ेब का देहांत हो जाने के बाद, आप फिर एक बार अपने पहले मालिक शहजादा मुअज़म शाह आलम की सेवा में पहुंच गए जो उस समय बहादुर शाह के नाम से दिल्ली के सिंहासन पर बिराजमान हो गया था । दूसरी ओर बहादुर शाह का छोटा भाई शहजादा आज़म भी सिंहासन का दावा कर रहा था और दक्षिण की ओर से एक भारी लश्कर ले कर दिल्ली की ओर बढ़ रहा था । उस समय बहादुर शाह का दिल कांप रहा था कि कहीं आज़म से टक्कर में उस को हार ही न हो जाए । उस समय गुरू गोबिंद सिंघ जी दक्षिण की यात्रा का विचार छोड़ कर राजपूताने में बघौर के पास से, जहां पर उन को औरंगज़ेब की मृत्यु की खबर मिल गई थी, वापिस पंजाब की ओर आ रहे थे । जब आप शाहजहानाबाद, दिल्ली के पास पहुंचे तो बहादुर शाह द्वारा, भाई नंद लाल, सहायता की गुहार ले कर गुरू जी की सेवा में हाजिर हुए ।

हर एक साधारण मनुष्य, उस समय का, गुरू साहिब का बहादुर शाह की ओर हमदर्दी भरा व्यवहार देख कर दंग रह जाता है । शाहज़ादा मुअज़म

के बाप दादा, गुरू साहिब और उनके बजुर्गों के व सिखों की धार्मिक लहर के, सख्त विरोधी रह चुके थे और उनके जानी दुश्मन थे । मुअज़म के पड़दादा जहांगीर ने गुरू गोबिंद सिंघ के पड़दादा गुरू अर्जुनदेव जी को बहुत यातनाएं दे कर शहीद किया था । बादशाह शाह जहान के राज्य के समय गुरू हरिगोबिंद साहिब के विरुद्ध चार बार मुगल सेनाओं ने चढ़ाई की थी चाहे हर बार उनको स्वयं ही हार खानी पड़ी । इसी प्रकार औरंगज़ेब ने सातवें पातशाह, गुरू हरि राय साहिब को दिल्ली बुलाने का यत्न किया और उनके ज्योति में विलीन होने के बाद गुरू हरि कृष्न जी को दिल्ली बुला भेजा । जहां आप ज्योति में समा गए । और आखिर में गुरू गोबिंद सिंघ जी के पिता गुरू तेग बहादुर जी को दिल्ली के चांदनी चौक में शहीद कर दिया गया । गुरू गोबिंद सिंघ जी की अपनी सारी आयु बादशाह औरंगज़ेब के सिखी विरोधी क्रोध व आतंक के वातावरण में गुजरी और अनेकों बार उनको मुगल फौजों का टाकरा करना पड़ा । आखिर सारी जायदाद लुट गई । लिखी हुई पुस्तकों का बहुमूल्य खजाना तबाह हो गया । दो साहिबजादे चमकौर की जंग में शहीद हो गए और दो सरहिंद की नीवों में जिंदा चिन दिए गए । उनको गोद-गोद कर कत्ल कर दिया गया और वहीं पर आप के सम्मान योग्य माता जी शहीद कर दिए गए । गुरू साहिब को आप के बिना, बेघर होना पड़ा और कई मुसीबतों का सामना करना पड़ा । **पर बलि-बलि जायं गुरू गोबिंद जी के और उनके महान उद्देश्य व आशय से कि फिर भी आप के दिलो दिमाग का पलड़ा सदा सहज रहा और आप ने क्रोध या बदले की भावना से ऊपर उठ कर औरंगज़ेब के, मुसीबत में फंसे पुत्र बहादुर शाह की, विपत्ति के समय सहायता करने का इकरार कर दिया** और 8 जून 1707 ई को जाजउ के स्थान पर हुए युद्ध में सिंहासन के सही हकदार शहज़ादा मुअज़म(बहादुर शाह) की सहायता के लिए अपने दो तीन सौ नेज़ा बरदार सिखों को भेज दिया । बिला शक नीचे दिया गया बंद आप पर पूरी तरह सही उतरता है :

कुफर अस्त दर तरीकति मा कीना दाश्तन ॥
आईनि-मा अस्त सीना चो आईनादाश्तन ॥

अर्थात

किसी के साथ शत्रुता रखना हमारे धर्म के विरुद्ध है ।

हमारा धर्म है दिल को शीशे की तरह साफ रखें । ईश्वर की कृपा से शाहज़ादा मुअज़म की फतेह हुई और वह औरंगज़ेब के सिंहासन का वारिस बना । शुक्राने के तौर पर बादशाह बहादुर शाह ने गुरू गोबिंद सिंघ को 23 जुलाई 1707 ई को शाही दरबार में मुलाकात के लिए निमंत्रण पत्र भेजा और साठ हजार की जड़ाउं धुखधुखी, कलगी और सिरोपाउ आदि भेंट किये और एक धार्मिक नेता की हैसीयत में उनको गुजारिश की कि वे उस सिरापाउ को वहां पहनन्ने की जगह पर अपने एक सेवक के हाथों दस्ती ले जाएं । उसी साल के अंत में बादशाह ने राजपूताना की ओर कछवहों के विरुद्ध मुहिम छेड़ने का इरादा बनाया । पर चूंकि दक्षिण की ओर से उस के छोटे भाई कामबख्श की बगावत की खबरें आनी शुरू हो गई थीं, उस को तुरंत उधर जाना पड़ गया । उस समय तक बादशाह और गुरू साहिब के बीच सुलह सफाई की बात किसी अंतिम चरण पर नहीं पहुंची थी इसलिए गुरू साहिब, बादशाह के साथ ही दक्षिण की ओर चल पड़े ताकि अवसर मिलते ही समय-समय पर बात चलती रह सके ।

जब बादशाही कैंप अगस्त 1708 ई के अंत में नांदेड़ पहुंचा और वहां पर गुरू साहिब माधो दास बैरागी के डेरे पर पधारे तो गुरू साहिब के साथ गए सिखों ने पास में ही खुली जगह पर मास पकाना शुरू कर दिया जिससे माधो दास के डेरे और नांदेड़ के हिंदुओं में हल-चल मच गई । करनी रब्ब की, उसी दिन (3 सितंबर 1708) को सूर्य ग्रहण था और मसिया भी थी । ये दोनों दिन हिंदुओं में बहुत पवित्र समझे जाते हैं । चाहे सिखों के लिए यह तारों की चाल का एक कुदरती परिणाम था और सिख मत के अनुसार वे ऐसे वहमों भ्रमों से मुक्त हो चुके थे, पर जब नांदेड़ के हिंदुओं ने बहादुर शाह के पास इस बात की शिकायत की और बादशाह ने इस की जांच की, तो इस को एक बेकार का बखेड़ा समझ कर रद्द कर दिया जिस से सारे हिंदुओं को शर्मिंदा होना पड़ा ।

इस घटना की ओर संकेत करते हुए ढाडी नब मल्ल अपनी समकालीन रचना *अमर नामा* में भाई नंद लाल की, बादशाह के साथ उनकी मौजूदगी का वर्णन इस प्रकार करते हैं :

ज़ि, वुज़राइ सुलतान बुदा नंद लाल
शुदा हमरहि शाहि वाला कमाल ।।
अर्थात
नंद लाल बादशाह के वज़ीरों में से था, और
वह बड़े कमाल वाले बादशाह के सफर का साथी था ।

यह अभिलेख इस बात के साक्षी हैं कि भाई नंद लाल सितंबर सन 1708 में बादशाह बहादुर शाह के एक सम्मान योग्य वजीर की हैसीयत में शाही कंपू के साथ नांदेड़ में मौजूद थे ।

लाला परमानंद अरोड़ा अपने उपरोक्त लेख में लिखते हैं कि चूंकि भाई साहिब की रचना *दस्तूरुलइन्श* में दर्ज किए खतों में बादशाह फ़र्रुखसीयर के गद्दी पर बैठने का वर्णन आता है इसलिए यह बात बिना किसी शक के कही जा सकती है कि आप सन 1713 ई तक जिंदा थे । पर इस बात का किसी विश्वसनीय इतिहासिक अभिलेख के न होने के कारण ठीक निर्णय नहीं किया जा सकता कि आप दक्षिण से कब पंजाब को वापिस आए और फिर किन हालातों में और कब अपने घर मुल्तान पहुंचे । हां, अनुमान यही लगाया जा सकता है कि दक्षिण की मुहिम की वापसी पर बहादुर शाह बादशाह जो अजमेर के पास, जब बाबा बंदा सिंघ की विजय की खबरें मिलीं और वह सीधा पंजाब को आया, तो भाई नंद लाल भी 1710 ई में शाही कंपू के साथ थे और लाहौर में बादशाह की मृत्यु के पश्चात या कुछ समय पहले 1712 ई में मुल्तान चले गए और वहीं पर उनका देहावसान हो गया ।

मुल्तान में भाई साहिब ने अपने जीवन के अंतिम दिन जनसाधारण की सेवा में व्यतीत किये और शहर के लोगों की शैक्षणिक जरूरतों को अनुभव करते हुए एक उच्च शिक्षा केन्द्र स्थापित किया जहां पर बिना किसी भेदभाव, धर्म कर्म के पक्षपात के, हिंदुओं और मुसलमानों के लिए प्रारंभिक फारसी, अरबी की विद्या से लेकर उस समय की उच्च से उच्च विद्या का उचित प्रबंध किया गया । भाई साहिब स्वयं उस विद्यालय की, दीनी और दुनियावी मसलों में बड़े शौक और प्रेम से अगवाई करते और उस की समस्याओं को हल करने में सहायक होते । लाला परमानंद के कथनानुसार ''इस महाविद्यालय का काम, भाई साहिब के जीवन के बाद भी भली प्रकार चलता रहा और आप

की संतान सन 1849 ई तक मुल्तान में अंग्रेजी राज्य काम हो जाने तक भी, इस की निगरानी और संरक्षण करती रही । यहां तक कि बीसवीं सदी के आदि तक भी ऐसे वृद्ध मौजूद थे, जो सड़क से निकलते हुए भी इस विद्यालय की टूटी फूटी इमारत के उस कमरे की गिरी हुई खिड़की के सामने सम्मान सहित अपना शीश झुका देते थे, जहां उन्होंने बचपन में इस खानदान के हाथों विद्या प्राप्त की थी ।

भाई नंद लाल जी की रचना

जैसा कि भाई नंद लाल की रचना की शैली से प्रतीत होता है, उन की सारी रचनाएं आपके गुरू गोबिंद सिंघ जी की सेवा में अनंदपुर में हाजिर होने पर सिख धर्म की शिक्षा के प्रभाव में रची गई हैं । ऐसी रचनाओं की संख्या दस तक पहुंच जाती है । इन में से सात फारसी में और तीन पंजाबी में हैं । कविता में आप *गोया* और *लाला* उपनामों का प्रयोग करते थे ।

(1) ज़िंदगी नामा (फारसी)

जैसा कि पहले वर्णन किया गया है कि यह रचना भाई साहिब ने आनंदपुर आने पर सब से पहले तैयार की थी और *बंदगी नामा* के शीर्षक से साहिब श्री गुरू गोबिंद सिंघ जी को भेंट की थी । इस के अध्ययन के पश्चात प्रसन्न हो कर गुरू साहिब ने इस का नाम *बंदगी नामा* की जगह *जिंदगी नामा* रखने का सुझाव दिया । इस रचना का विषय प्रभु-प्रीति और गुरू-भक्ति है और आम विचार गुरबाणी में से लिए गए हैं और कई स्थानों पर तो उनके भाव, केवल गुरबाणी की पंक्तियों का वैसे का वैसा अनुवाद हैं ।

(2) ग़ज़लीआत अर्थात दीवानि-गोया (फारसी)

यह भाई साहिब की सब से अधिक प्रसिद्ध रचना है जो कई बार छप चुकी है । काव्य निबंध की तीक्षणता, भावों की ऊंचाई और शैली की सुंदरता के कारण यह एक अद्वितीय और महत्वपूर्ण वस्तु है तथा आध्यात्मिक और सदाचारक दृष्टिकोण से एक प्रभावशाली कृति है । गुरबाणी के भावार्थों का प्रतिनिधित्व करने में यह एक सफल यत्न है । यही कारण है कि पंजाबी में इस के अनेकों अनुवाद हो चुके हैं ।

(3) तौसीफ़–ओ–सना और ख़ातिमा (फारसी)

जैसा कि इस के नाम से ही प्रत्यक्ष है, यह रचना ईश्वर के यश व कीर्ति-गायन से संबंधित है । ख़ातिमे के अतिरिक्त यह सारी रचना गद्य में है । फारसी अरबी के कठिन शब्दों की अत्यंत भरमार ने, इस रचना को इतना कठिन बना दिया है कि शायद इसी कारण आम विद्यार्थियों ने इस की ओर ध्यान नहीं दिया और यह छप नहीं सकी थी ।

(4) गंज नामा (फारसी)

यह गद्य और पद्य की साझी रचना है जिस में कर्ता ने सिख धर्म के प्रणेता गुरू नानक से ले कर, दसम पातशाह गुरू गोबिंद सिंघ तक, सारे गुरुओं की अलग-अलग स्तुति की है और अपनी श्रद्धा का इज़हार किया है ।

(5) जोत बिगास (फारसी कविता)

इस रचना में सिख धर्म के प्रणेता, गुरू नानक साहिब की नूरानी ज्योति का उन की गद्दी पर बैठने वाले गुरुओं में, क्रमानुसार प्रकट होते जाना दर्शाया गया है और दसम पातशाह गुरू गोबिंद सिंघ को *हक-हक अदेस, बादशाह दरवेश, पूरन पुरख* के रूप में पेश किया गया है । यह पुस्तक, मय पंजाबी अनुवाद के, पहले पहल भाई मेघ राज *गरीब* द्वारा गुरदयाल सिंघ एंड सन्स लाहौर द्वारा संवत 1975 विक्रमी तदनुसार 1918 ई में प्रकाशित की गई थी ।

(6) जोत बिगास (पंजाबी कविता)

यह पुस्तक उपरोक्त नाम की फारसी रचना का हू-बहू पंजाबी अनुवाद नहीं बल्कि एक स्वतंत्र कृति है ।

(7) रहितनामा और

(8) तनरवाह नामा (पंजाबी कविता)

इन दोनों रचनाओं के बारे में स्वर्गवासी भाई काहन सिंघ जी, नाभा निवासी, कर्ता गुर शबद रत्नाकर महान-कोश का विचार है कि यह भाई नंद लाल की कृतियां नहीं हैं । यदि यह बात सही भी मान ली जाय, तो भी ये दोनों रचनाए *रहित नामा* और *तनरवाहनामा*, सेवक और गुरू, अर्थात भाई नंद लाल और गुरू गोबिंद सिंघ के प्रश्नोत्तरों का प्रतिनिधित्व करती हैं । इसलिए

इन का भाई साहिब के संग्रह में शामिल कर लेना मूल रूप से ठीक प्रतीत होता है । भाई साहिब के खानदान के लोगों का विश्वास है कि ये दोनों रचनाएं भाई साहिब की अपनी ही हैं । यही विचार सर सरदार अतर सिंघ रईस, भदौड़ का था जैसा कि उनके द्वारा 1876 ई में अैल्बर्ट प्रैस लाहौर में छपे *रहित नामा भाई नंद* के अंग्रेजी अनुवाद से प्रकट होता है । ये दोनों रचनाएं पंजाबी में कई बार छप चुकी हैं । फारसी में से गुरमुखी अक्षरों में लिप्यांतरित करते समय छपाई की अनेकों त्रुटियां इनमें आ गई हैं जिन को भाई साहिब द्वारा खानदान से प्राप्त किये गये नुस्खों(लेखन से पूर्व बनाया जाने वाला प्लाट, परियोजना नोट्स, इत्यादि,) से मिलान करके सुधारने का प्रयास किया जा चुका है ।

रहितनामे के अंत में दी गई तिथि और रचना के स्थान से प्रतीत होता है कि यह माघ सुदी नवम, दिन वीरवार संवत 1752 तदनुसार 4-5 दिसंबर 1695 को सतलुज के किनारे अनंदपुर में लिखा गया था और इस में दी गई *रहित* उस समय तक की थी जब कि अभी *खालसा* प्रकट नहीं किया गया था, और न ही तब तक गुरू गोबिंद सिंघ जी ने *सिंघ* शब्द अपने नाम के साथ प्रयोग करना आरंभ किया था, जो केवल खालसा की सृजना के समय से ही प्रयोग में आया । *तनखाह नामा* खालसा के अस्तित्व में आने के बाद की रचना है जिस में *खालसा* और *गोबिंद सिंघ* शब्दों का आम प्रयोग आया है और अंत में *खालसा* की स्तुति दर्ज की हुई है ।

(9) दस्तूरुल-इनशा(फारसी गद्य)

यह भाई नंद लाल के कुछ पत्रों का संग्रह है जो कि समय-समय पर उन्होंने अपने सज्जनों-मित्रों और साक-संबंधियों को लिखे थे ।

जैसे कि लाला परमानंद के लेख के संदर्भ से पहले वर्णन किया गया है, भाई नंद लाल के ये लेख संग्रह न केवल पंजाब और मुल्तान के इतिहास का एक बहुमूल्य खजाना हैं, बल्कि भाई साहिब के जीवन के बारे भी इस में काफी जानकारी मिलती है । लाला परमानंद ने दस्तूरुल इन्शा की पांडुलिपि को भाई साहिब के खानदान में ही देखा परखा था, जो कि अब सदा के लिए लुप्त हो गई प्रतीत होती है । कम से कम इस की खोज में हमारी पूछ-ताछ अभी तक सफल नहीं हुई और जो हस्तलिखित पांडुलिपि हमें भाई भगवंत

सिंघ हरी जी नाभा से प्राप्त हुई है, वह अधूरी है और उस में वह सारा विवरण नहीं मिलता जिस की चर्चा लाला परमानंद ने की है ।(डॉ गंडा सिंघ)

(10) अरज़ुल-अलफाज़(फारसी कविता)

यह रचना भाई नंद लाल की फारसी अरबी शब्दावली का एक विशाल नमूना है और इस को स्थान-स्थान पर दैवी स्तुति और गुरू साहिबान की स्तुति के लिए प्रयोग किया गया है । आध्यात्मिक ज्ञान और दर्शन के विशेष शंब्दों का यह एक बहुमूल्य भंडार है । इस से न केंवल भाई साहिब की शैक्षिक योग्यता का ही अनुमान लगाया जा सकता है बल्कि उनकी दूसरी रचनाओं को समझने के लिए भी बड़ी सहायता मिलती है । यह रचना पहली बार फारसी संग्रह *कुलीआति भाई नंद लाल में* छापी गई थी पर इस की अधि कांश बोली साहित्यक ही है, इतिहासिक या धार्मिक नहीं, और इस का रस केवल फारसी और अरबी के माहिर विद्वान ही ले सकते हैं, दूसरे नहीं ।

भाई नंद लाल की रचना में से
कुछ चुनींदा शेयर

दीवानि गोया में से

हवाइ बंदगी आवुरद दर वजूद मरा
वगरना ज़ौकि चुनीं आमदन न बूद मरा ।

भजन बंदगी की इच्छा मुझे अस्तित्व में लाई है,
नहीं तो मुझे इस तरह आने का कोई शौक न था ।

चिरा बेहूदा मीगरदी ब-सहिरा ओ ब-दश्त अै दिल
चूं आं सुलतानि खूबां करदा अंदर दीदा मंज़िल हा ।

तूं क्यों जंगलों व सुनसान में मारा मारा फिरता है ।
जब कि उस उच्च कोटि के सुंदर लोगों के सुल्तान ने तेरी आंखों में डेरा डाल रखा है ।

चू ग़ैर अज़ ज़ाति-पाकिश नीस्त दर हर जाकि मी-बीनम
बगो गोया कुजा बिगुज़ारम ई दुनीआ ओ अैहलि हा ।

उस वाहिगुरू के बिना जिधर भी मैं देखता हूं, जब कुछ नज़र नहीं आता,
तो गोया! तूं ही बता, भला, मैं इस दुनियां और घर-बार को कैसे और कहां छोड़ूं?

रहि-रसानि राहि हॅक आमद अदब
हम बदिल यादि खुदा व हम बलब ।

प्रभु की राह पर चलने वाले राहगीरों के लिए जरूरी है कि उनके दिल में भी उस की याद बनी हो और उनके होंठों पर भी उसका सुमिरन हो ।

दिल अगर दाना बवद अंदर किनारश यार हस्त
चशम गर बीना बवद दर हर तरफ दीदार हसत ।

यदि दिल समझ वाला हो, तो सज्जन उस की कौली में है ।
और आंख यदि देखनी वाली हो तो हर ओर दीदार ही दीदार है ।

सर अगर दारी बिरौ सर रा बिनिह बर पाइ ऊ
जां अगर दारी निसारिश कुन अगर दरकार हस्त ।

यदि तेरे पास सिर है तो जा, जा कर सिर को उसके चरणों पर रख दे, और यदि तेरे पास जान है और तुझे यदि जरूरत पड़े तो इस को (उस से) कुर्बान कर दे ।

फ़िदाइ ऊ शौ व उज़रे मख़ाह अै गोया
कि दर तरीकति-माजाइ उज़र खाही नीस्त ।

उस से कुर्बान हो जा, इस में हील-हुज्जत न कर, ऐ गोया !
क्योंकि हमारी रीति में हील-हुज्जत को कोई स्थान नहीं !

यॅक दम ब-खेश राह ना बुरदम कि कीस्तम,
ऐ वाइ नकद ज़िंदगीअम राइगां गुज़श्त ।

मैं एक पल के लिए भी अपने मूल को न पा सका - न जान सका कि मैं कौन हूं ? अफसोस! ज़िंदगी की रास-पूंजी, सभी व्यर्थ ही चली गई ।

बिगुज़र अज़ बेगानगीहा ओ बखुद आशना शौ
हर कि बाख़ुद आशना शुद अज़ ख़ुदा बेगाना नीस्त ।

तात पराई, ईर्ष्या छोड़ कर अपने आप को पहचान,
जो भी अपने आप को जान लेता है, वह प्रभु से अनजान नहीं है ।

बादशाहीए जहां जुज़ शोरो गौग़ा बेश नीस्त
पेशि देरवेशे कि ऊ अज़ मुदआ ख़ाहद गुज़श्त।

उस दरवेश की नज़रों में, जिसकी निजी कोई गर्ज़ नहीं, इस जहान की बादशाही शोर-शराबे से बढ़ कर कुछ न हो।

बराए गुरदाइ नां गिरदि हर दुनी चि मी गरदी
तमआ दीदी कि आदम रा असीरि दाना मी साज़द ।

रोटी के एक टुकड़े के लिए तूं क्यों हर कमीने के मगर भागता फिरता है,

तूंने देखा ही है कि लोभ, बंदे को एक दाने के लिए कैदी बना देता है ।

ईं उमरि गिरां मायाइ गनीमत शुमर आख़िर
मा सुबह न दीदेम कि ऊ शाम न-दारद ।

इस बहुमूल्य आयु को, आखिर, ग़नीमत समझ,
हमने कोई ऐसी सुबह नहीं देखी, जिस की शाम न हुई हो ।

कदम आं बिह कि ऊ राहि ख़ुदा पैमूदा मी बाशद
ज़बाने बिह कि दर ज़िकरि खुदा आसूदा मी बाशद ।

कदम वह ही अच्छा है, जो प्रभु की राह पर उठाया जाए,
जिव्हा वही भली है, जो प्रभु के सुमिरन में सुख जाने ।

ज़ फैज़ि मुरशदि कामिल मरा माअलूम शुद आख़िर
कि दाइम मरदुमि दुनीआ ग़म-आलूदा मीबाशद ।

पूरे गुरू की कृपा से अंत में मुझे यह ज्ञान हो गया,
कि दुनियां के लोग सदा ग़म और फिक्र में फंसे रहते हैं ।

ज़हे साहिबदिलि रौशन ज़मीरि आरिफ़ि कामिल
किह बर दरगाहि हॅक पेशानीए ऊ सूदा मे बाशद ।

कितना भाग्शाली है वह दिल का मालिक, जिस की आत्मा रोशन है और जो पूरा ज्ञानवान है,
और जिस का माथा प्रभु की दरगाह पर टिकता है ।

तमाम दौलति गीती फ़िदाए ख़ाकि दरश
किह तारा फ़िदा-शन गरदद कसे बज़ा न रस्द ।

सारे संसार की दौलत उसके दर की धूड़ से वार दूं,
क्योंकि जब तक कोई ख़ाक नहीं बनता, अपने मनोरथ को नहीं पा सकता।

ऐ बुअलफजूल गोया अज़ इशकि ऊ मज़न्न दम
को पा निहद दरीं रहि आं रा सर नहि बाशद ।

ऐ मूरख गोया, उस के प्यार की डींग न मार,
इस रास्ते पर वही पैर रख सकता है, जिस का सिर न हो ।

सद कार करदाई कि नयाइद बकारि तू
गोया बिकुन कि बाज़ बिआइद बकारि उमर ।

तूने सैंकड़े काम ऐसे किए हैं, जो तेरे किसी काम नहीं आने के,
गोया, तूं ऐसे काम कर, जो फिर भी तेरे काम आएं ।

मुदाम शाकिरो शादाब चूं दिलि गोया
तमामि मुतलिबो फ़ारिग़ ज़ि मुदआ मी बाश ।

सदा गोया के दिल की भांति संतोषी और तरो-ताज़ा रह,
तूं अपने निजी स्वार्थों से मुक्त हो जा(इस तरह तूं अपने असली लक्ष्य को पा लेगा) ।
सदा गोया के दिल की भांति संतोषी और तरो-ताज़ा रहो,
तो अपने स्वार्थो से मुक्त हो जा(इस तरह तूं असली मनोरथ को पा लेगा ।)

आबि हयाति मा सख़ुन पीरि कामिल अस्त
दिलहाइ मरदा रा बिकुनद ज़िंदा ओ ख़लास।

पूरे और कामिल सतगुरु का शबद हमारे लिए अमृत है,
यह मुर्दा दिलों को पुनर्जीवित और मुक्त कर देता है ।

अज़ ख़ुद-नमाईए तू ख़ुदा हस्त दर तर
बीनी दरूनि ख़्वेश शवी अज़ ख़ुदी ख़्लास ।

तेरे अहं के प्रदर्शन से ईश्वर कोसों दूर है,
यदि तूं अपने अंदर झांके तो अहं से मुक्त हो जाए ।

गोया तू दस्ति ख़ुद रा अज़ हिरस कोताह कुन
ता अंदरूनि ख़ाना बीनी ख़ुदाइ ख़ास ।

हे गोया! तूं अपना हाथ मोह तथा लालच से खींच ले
ताकि अपने घर के अंदर ही उस महान प्रभु को देख सके ।

साहिब हाल बजुज़ हरफ़ि ख़ुदा दम न-ज़नद
गैरि ज़िकरश हमा आवाज़ बवद कीलो काल ।

प्रभु के महिरम सिवाय प्रभुनाम के और कोई शब्द मुंह से नहीं उचारते,
उसके सुमिरन के बिना और सब कुछ वाद-विवाद है ।

गोया ज़ि चशमि यार कि मख़मूर गश्ताएम
कै ख़्वाहशि शराबि पुर असरार मी कुनेम ।

गोया, हम प्यारे की दृष्टि से ही मस्त हो गए हैं,
हम भला फिर क्यों भेद भरी शराब की चाह करें ।

हर कस ब-जहां नशवो नुमा मी ख़्वाहद,
अस्पो शुतरो फ़ीलो तिला मी ख़्वाहद,
हर कस ज़ि बराए ख़्वेश चीज़े मी ख़्वाहद,
गोया ज़ि खुदा यादि ख़ुदा मी ख़्वाहद ।।

हर मनुष्य इस जहान में बढ़ना-फूलना चाहता है, वह घोड़े, ऊंठ, हाथी और सोने की चाह रखता है । हर आदमी अपने लिए कुछ न कुछ चाहता है, परंतु गोया तो प्रभु से केवल प्रभु की याद की ही चाह रखता है।

मबर अै बाद ख़ाकम अज़ दरि दूस्त
दुश्मनम सरज़नश कुनद कि हर जाईसत ।।१।।

ए हवा! मेरी मिट्टी सजन के दरवाजे से न उड़ाना,
नहीं तो वैरी शोर मचाएगा कि यह तो हर स्थान पर है ।

ज़िंदगी नामा में से:

आं हजूमि ख़ुश कि अज़ बहिरि ख़ुदा-सत
आं हजूमि ख़ुश कि अज़ दफ़ाइ बला-सत ।।२२।।

वह सतसंग मुबारक है, जो ईश्वर के बारे में हो,
वह सतसंग मुबारक है, जो मन की बलाओं को दूर करने के लिए है ।

आं हजूमि खुश कि बहिरि यादि उ-सत
आं हजूमि खुश मि हक बुनिआदि ऊ-सत ।।२३।।

वह सतसंग मुबारक है, जो ईश्वर की याद में हो,
वह सतसंग मुबारक है, जिसकी नींव सत्य पर आधारित हो ।

आ हजूमि बद कि शैतानी बवद
आकबत अज़ वै पशेमानी बवद ।।२४।।

वह जुट बुरा है, जहां शैतानी के काम होते हों,

जिन्हें करने से बाद में पछताना पड़ता हो ।

हर कि ग़ाफ़िल शुद चिरा आकिल बवद
हर कि ग़ाफ़िल गशत ऊ जाहिल बवद ।।२५।।

जो भी प्रभु से टूट गया, उसे बुंद्धिमान कैसे कहा जा सकता है,
जो भी प्रभु से टूट गया, समझो वह मूर्ख व उजड्ड है ।

मुरशदि कामिल हमां बांशद हमां ।।
कज़ कलामश बूइ हक आइद अयां ।।११५।।

पूरन सतिगुरू वही हो सकता है,
जिस की बाणी में से प्रभु की सुगंधि स्पष्ट महक रही हो ।

कीलो काले गर बराइ हक बवद
अज़ बराइ कादरि मुतलिक बवद ।।१४९।।

यदि सत्य की बात और चर्चा करनी हो,
तो यह उस सर्व शक्तिमान के बारे ही हो सकती है ।

बंदा ता बादशद बवाइ बंदगीस्त
गैर हरफ़ि हक हमा शरमिंदगीस्त ।।२१०।।

बंदा तो ही होता है, यदि वह बंदगी के लिए है,
बिनां प्रभु का वर्णन किए, सब शर्मिंदगी है ।

बंदा पैदा शुद बराए बंदगी
खुश इलाजे हस्त बहिरि बंदगी ।।२१७।।

बंदा बंदगी के लिए पैदा हुआ है,
भजन बंदगी ही ज़िंदगी का एकाएक इलाज है ।

दर कसब बाशंद आज़ाद अज़ कसब
उमर गुज़रानंद अंदर यादि रॅब ।।२३४।।

प्रभु के प्यारे अपना काम करते हुए भी काम से आजाद हैं,
वे अपनी आयु ईश्वर की याद में व्यतीत करते हैं ।

तरज़ि यक-रंगी अजब रंग आरदश
कज़ बदन नूरि ख़ुदा मी-बारदश ।।२४३।।

एक अकालपुरख की प्रेमारीति अजब रंग लाती है,
ऐसी प्रेमा-भक्ति के अंग-अंग में से ईश्वर के नूर की वर्षा होती है ।

या इलाही बंदा रा तौफ़ीक दिह
ता ब-यादत बिगुज़रद ई उमर बिह ।।२५५।।

हे अकाल पुरख! इस बंदे को ऐसी हिम्मत प्रदान कर,
ताकि यह उम्र तेरी याद में अच्छी तरह गुज़ारे ।

चुं ज़ शहिरग हस्त शाह नज़दीक तर
चूं बसहिरा मीरवी अै बे-ख़बर ।।३८५।।

जब कि वह सच्चा पातशाह (तेरी) शाहरग से भी नज़दीक है,
तब हे अनजान! तूं जंगल-सुनसान में क्यों भटकता फिरता है?

गर हज़ूरी बा ख़ुदा बाइद ब-तो
दर हज़ूरि मुरशदि कामिल बिरौ ।।४४०।।

यदि तुझे प्रभु के सम्मुख होने की चाह है,
तब तूं पूर्ण सतगुरू के सम्मुख हो जा ।

ता तवानी बंदा शौ साहिब मबाश
बंदा रा जुज़ बंदगी नबवद तलाश ।।४७७।।

जहां तक हो सके तूं सेवक बन, साहिब न बन,
बंदे को बंदगी के बिना किसी और वस्तु की तलाश नहीं होती ।

आं तिला फ़ानी वा सद मौजि बला
ई तिला बाकी चू ज़ाति किबरीआ ।।४८४।।

यह (माया रूपी) सोना नश्वर है और सैंकड़ों आफतों का भंवर है ।
सत्यस्वरूप वाहिगुरू की जाति की भांति, यह (बंदगी रूपी) सोना अनश्वर है।

दीदा अज़ दीदारि-हॅक पुर-नूर कुन
गैर हॅक हज़ ख़ातरि दिल दूर कुन ।।५१०।।

(हे अकाल पुरख! मेरी) आंखों को प्रभु के दीदार से नूरो-नूर कर दे, (मेरे) दिल में से प्रभु के बिना सब कुछ दूर कर दे ।

गंज नामा में से:

नासिरो मनसूर गुर गोबिंद सिंघ
ईज़दि मनज़ूर गुरू गोबिंद सिंघ ।।१०५।।

(गरीबों का रक्षक)गुरू गोबिंद सिंघ - ईश्वर की रक्षा में, गुरू गोबिंद सिंघ द्वारा स्वीकार्य गुरू गोबिंद सिंघ ।

हक्क रा गंजूर गुर गोबिंद सिंघ
जुमला फैज़ि नूर गुर गोबिंद सिंघ ।।१०६।।

गुरू गोबिंद सिंघ सत्य का ख़ज़ाना है,
गुरू गोबिंद सिंघ संपूर्ण नूर की कृपा हैं ।

हक्क हक्क आगाह गुर गोबिंद सिंघ
शाहि शहनशाह गुर गोबिंद सिंघ ।।१०७।।

गुरू गोबिंद सिंघ सत्य के प्रकाश को समझने वालों के लिए सत्य है,
गुरू गोबिंद सिंघ बादशाहों का बादशाह है ।

बर दो आलम शाह गुर गोबिंद सिंघ
ख़सम रा जां-काह गुर गोबिंद सिंघ ।।१०८।।

गुरू गोबिंद सिंघ दोनों जहानों का बादशाह है,
गुरू गोबिंद सिंघ दुश्मन की जान को कब्ज़ कर लेने वाला है ।

ख़ालिसो बे-कीना गुर गोबिंद सिंघ
हक्क हक्क आईना गुर गोबिंद सिंघ ।।१२४।।

गुरू गोबिंद सिंघ दिल का साफ़ और शत्रु भावना से खाली है,
गुरू गोबिंद सिंघ स्वयं सत्य है और सत्य का शीशा है ।

जोत बिगास (फारसी) में से:

हज़ार ईशरो इंदर दर पाइ ऊ ।।
ज़ि हर बर-तरीं बर-तरीं जाइ ऊ ।।१२।।

हज़ारों ईश्वर और इंद्र गुरू नानक के चरणों में हैं,
सारे महापुरुषों में गुरू नानक का स्थान सर्वोच्च है ।

हज़ारां चूं देवी चूं गोरख हज़ार
कि पेशि कदमहाइ ऊ जां-सिपार ।।१४।।

हज़ारों देवी देवताओं और हजारों गोरख(मत वालों) की भांति
गुरू नानक के चरणों से अपनी जान न्यौछावर करते हैं ।

हमू नानक अस्तो हमू अंगद अस्त
हमू अमरदास अफज़लो अमजद अस्त ।।२३।।

नानक भी वही है और अंगद भी वही है,
बख्शिश और बड़ी महानता का मालिक अमरदास भी वही है ।

हमूं रामदासो हमू अरजुन अस्त
हमू हरगोबिंद अकरमो अहिसन अस्त ।।२४।।

वही राम दास और वही अरजुन है,
सब से बड़ा और अच्छा हरिगोबिंद वही है ।

हमू हस्त हरि राइ करता गुरू
बदू आशकारा हमा पुश्तो रू ।।२५।।

वही हरिराय कर्ता गुरू है, जिस को
हर वस्तु के सही-गलत होने का पता चल जाता है ।

हमू हरिकिशन आमदा सर-बुलंद
अज़ो हासिल उमीदि हर मुस्तमंद ।।२६।।

वही सिर-कदा हरिकिशन है,
जिस से हर आशावान की मुराद पूरी होती है ।।

हमू हस्त तेग़ि बहादर गुरू
कि गोबिंद सिंघ आमद अज़ नूरि ऊ ।।२७।।

वही गुरू तेग बहादुर है,
जिस के नूर से गोबिंद सिंघ प्रकट हुआ है ।

हमू गुरू गोबिंद सिंघ हमू नानक अस्त
हमा शबदि ऊ जोहरो मानक अस्त ।।२८।।

वही गुरू गोबिंद सिंघ है और वही नानक गुरू है,
उसके शब्द जवाहरात और माणिक मोती हैं ।

जोति बिगास (पंजाबी) में से:

नानक सो अंगदु गुर देवना । सो अमर दास हरि सेवना ।।२७।।
सो राम दास सो अरजना । सो हरि गोबिंद हरि परसना ।।२८।।
सो कर्त्ता हरि राइ दातारनं । सो हरि, कृष्न अगंम अपारनं ।।२९।।
सो तेग बहादुर सति सरूपना । सो गुर गोबिंदसिंघ हरि का रूपना ।।३०।।
सभ एको एको एकना । नहीं भेद ना कछू भी पेरवनां ।।३१।।

रहित नामा

सिरी गुरू वाच

चौपई

गुर सिख रहित सुणहु मेरे मीत । उठि प्रभाति करे हित चीत ।।१।।
वाहिगुरू पुन मंतरह जाप । करि इश्नान पढ़े जपु जाप ।।२।।
दरसन करे मेरा पुन आए । अदब सिउं बैठ गुर हित चित लाए ।।३।।
तीन पहिर जब बीते जाण । कथा सुणे गुर हित चित लाण ।।४।।
संधिआ समे सुणे रहिरास । कीरतन कथा सुणे हरि जास ।।५।।
इन में नेम जो एक कराए । सो सिख अमर पुरी में जाए ।।६।।
पांच नेम पुर सिख जो धारै । इकीस कल कुटंब को तारे ।।७।।
तारे कुटंब मुकत सो होए । जनम मरन ना पावै सोइ ।।८।।

नंद लाल वाच

।।दोहा।। तुम जु कहा गुर देव जी दरसन करि मोहि आइ ।।
लखीए तुमरा दरस कहां कहो मोहि समझाइ ।।९।।

सिरी गुरू वाच

।।दोहा।। तीन रूप है मोहि के सुणहु नंद चित्त लाइ ।।
निरगुण सरगुण गुरशबद हैं कहे तोहि समझाइ ।।१०।।

।।चौपई।।

एक रूप तिह गुण ते परे । नेत नेत जिह निगम उचरे ।।११।।
घटि घटि बिआपक अंतर जामी । पूर रहिओ जिउं जल घट भानी ।।१२।।
रोम रोम अछर सो लहौ । जदारथ बात तुम सों सति कहों ।।१३।।
जो सिख गुर दरसन की चाहि । दरसन करे ग्रंथ जी आहि ।।१४।।
परभात समें करके इसनान । तीन परदछणां करे सुजान ।।१५।।
।।दोहरा।। हाथ जोड़ कर अदब सों बैठे मोहि हजूर
सीस टेक गुर ग्रंथ जी बचन सुणे सो हजूर ।।१६।।

।।चौपई।।

शबद सुणे गुर हित चित लाइ । गिआन शबद गुर सुणे सुणाइ ।।१७।।
जो मम साथ चाहे कर बात । ग्रंथ जी पढ़े सुणे बिचारे साथ ।।१८।।
जो मुझ बचन सुणन की चाइ । ग्रंथ जी पढ़े सुणे चित्त लाए ।।१९।।
मेरा रूप ग्रंथ जी जाण । इस में भेद नहीं कुछ मान ।।२०।।
तीसर रूप सिख हैं मोर । गुरबाणी रत्त जिह निस भोर ।।२१।।
विसाह प्रीत गुर शबद जो धरे । गुर का दरस नित उॅठ करे ।।२२।।
गिआन शबद गुरू सुणे सुणाए । जपु जी जापु पढ़े चित्त लाए ।।२३।।
गुरद्वारे का दर्शन करे । पर–दारा का तिआग जो करै ।।२४।।
गुर सिख सेवा करे चित लाए । आपा मन का सगल मिटाइ ।।२५।।
इन करमन में जो परधान । सो सिख रूप मेरा पहिचाण ।।२६।।
।।दोहरा।। **ऐसे गुरसिख मान है सेवा करे जो कोए ।।**
तन मन धन पुंन अरप के सो मुझ सेवा होए ।।२७।।
ऐसे गुरसिख सेव की मोहि पहूचे आए ।।
सुणहु नंद चित देइ कर मुकति बैकुंठे जाए ।।२८।।

नंद लाल वाच

निरगुण सरगुण गुरशबद जी कहे रूप तुम तीन
निरगुण रूप नहीं देखीए सरगुण सिख अधीन ।।२९।।
।। चौपई।। **तुमरा निरगुण रूप अपारा । सो किम देखै दीन दिआरा ।।३०।।**
जगत गुरू तुम कहो सवामी । घटि घटि वासी अंतर जामी ।।३१।।

सिरी गुरू वाच

सुण सिख भाई नंद सो लाल । तुम सुण हमरे बचन रसाल ।।३२।।
गुर सिख सरगुण रूप सुजान । पृथम सेव गुर हित चित कान ।।३३।।
गुर सिख सेव शबद जो गहो । शबद सरूप सो इह बिध लहो ।।३४।।
शबद सरूप वाक जो धारे । तिस ते लखैं अपर अपारे ।।३५।।
ते में गोप्ट कही सो भाई । पढ़े सुणे जो चित हित लाई ।।३६।।
तिस की महिमा कहूं बखाण । जोती जोति मिले मोहि मान ।।३७।।
संमत सतरा सहिस सो बावण । मॅग्घर सुदी नौमी सुख दावण ।।३८।।
सुर गुर वार सतद्रू तीर । बचन कहे नंद लाल सो बीर ।।३९।।
।।दोहरा।। वाहिगुरू गुर जापए वाहिगुरू कर धिआन ।।
मुकत लाभ सो होइ हैं गुर सिख रिदि महि मान ।।४०।।

तनख़ाह नामा

।।दोहरा।। प्रश्न कीआ नंद लाल जी गुरू बताईए मोहि
कौण करम इन जोग हैं कौण करम नहीं सोहि ।।१।।
।।दोहरा।। नंद लाल तुम बचन सुणहु सिख करम है ऐहु
नामु दानु इश्नान बिन करे ना अन सिउं नेहु ।।२।।

चौपई

प्राताकाल सतिसंग ना जावै । तनख़ाहदार बहु वॅड्डा कहावैं ।।३।।
सतिसंग जाए कर चित्त डुलावै । ईहां ऊहां ठौर ना पावै ।।४।।
हरि जस सुणते बात चलावै । कहे गोबिंद सिंघ वोह जमपुर जावै ।।५।।
निरधन देख ना पास बहावै । सो तनखाही मूल कहावै ।।६।।
शबद गिआन बिन करे जो बात । ता कै कछू न आवै हाथ ।।७।।
शबद भोग ना निवावे सीस । तां कोमिले ना परम जगदीस ।। ८।।

दोहरा

जो प्रसादि को बांट है मन में धारे लोभ
किसे थोड़ा किसी अगला सदा रहे तिस सोग ।।९।।
।।चौपई।।
कढ़ाह प्रसादि की बिध सुणि लीजै । तीन भांत को. समसर कीजै ।।१०।।

लेपण आगे बहुकर दीजै । मांजण धर भांजण धोवीजै ।।११।।
करि इश्नान पवित्र होइ बहे । वाहिगुरू बन अवर न कहे ।।१२।।
नवतन कुंभ पूर जल लेह । गोबिंद सिंघ सफल तिन देह ।।१३।।
करि तिआर चौकी पर धरे । चार ओर कीरतन बहि करे ।।१४।।

दोहरा

मोहर तुरक की सिर धरे लोह लगावै चरन ।
कहै गोबिंद सिंघ सुणो लाल जी फिर फिर होए तिस मरन ।।१५।।

चौपई

लगै दीवान सुण मूल ना जावै । रहित बिना प्रसादि वरतावै ।।१६।।
सूहा पहिण लए नसवार । कहे गोबिंद सिंघ जम करे खवार ।।१७।।
माए भैण जो आवै संगति । दृष्ट बुरी देखै तिस पंगति ।।१८।।
सिख होइ जो करत क्रोध । कंनिआ मूल ना देवे सोध ।।१९।।
धी भैण का पैसा खाइ । कहे गोबिंद सिंघ धके जम खाइ ।।२०।।
सिख होए बिन लोह जो फिरै । आवत जावत जनमै मरै ।।२१।।
माल अतिथि का बल करे छलै । जपु तपु तां को सभ निहफलै ।।२२।।

सोरठा

कंघा दोवें वकत कर पग चुणै कर बांधई ।।
दातन करे नित नीत, ना दुख पावै लाल जी ।।२३।।

दोहरा

दसवंध गुरू नहि देवै झूठ बोल जो खाइ ।।
कहे गोबिंद सिंघ लाल जी तिस का कछू न बिसाहि ।।२४।।

चौपई

ठंडे पाणी जो नहीं नहावै । बिन जपु पढ़े प्रसादि जो पावै ।।२५।।
बिन रहिरास संधिआ जो खोवै । कीरतन पढ़े बिन रैण जो सोवै ।।२६।।
चुगली कर जो काज बिगारै।। धृग तिस जनम जो धरम बिसारै ।।२७।।
करे बचन जो पाले नाहीं । कहे गोबिंद सिंघ तिस ठौर कत नाहीं ।।२८।।
लै तुर्कन ते मास जो खावै । बिन गुर शबद बचन जो गावै ।।२९।।
तृय राग सुणै चित लाए । सुणहु लाल सो जम पुर जाए ।।३०।।

चौपई

अरदास बिना जो काज सिधावै । भेट कीए बिन कुछ मुख पावै ।।३१।।
तिआगी बसत ग्रहिण जो करै । बिन तृय आपणी सेज जो धरै ।।४२।।
अतिथि वेख नहीं देवै दान । सो नहीं पावै दरगहि मान ।।३३।।
कीर्तन कथा सिउं मन नहीं लावै । संत सिख को बुरा अलावै ।।३४।।
निंदा जूआ हरे जो माल । महां दुख पावै तिस को काल ।।३५।।
गुर की निंदा सुणे ना कान । भेट करे तिस संग किरपान ।।३६।।

दोहरा

गोलक राखे नाहि जो छल का करे वपार ।
कहे गोबिंद सिंघ लाल जी भोगे नर्क हज़ार।।३७।।

चौपई

वाहिगुरू बिन कहे जो खावै । वेसवा द्वारे सिख जो जावे ।।३८।।
पर स्त्री सिउं नेहो लगावे । कहे गोबिंदसिंघ वुह सिख ना भावै ।।३९।।
गुर तलपी कपटी है जोए । बडो तनखाही जाणो सोए ।।४०।।
गुर को छोड अवर सिउं मांगे । रातरी सोए तेड़ होए नांगे ।।४१।।
नगन होए कर भोग जो करे । नगन होए जल मज्जण करै ।।४२।।

दोहरा

नगन होइ बाहर फिरै नगर सीस जो खाइ ।।
नगन प्रसादि जो बांटई तनख़ाही बडा कहाइ ।।४३।।

चौपई

खालसा सोई जो निंदा तिआगे । खालसा सोई लड़े होइ आगै ।।४४।।
खालसा सोइ जो पंच को मारै । खालसा सोइ करम को साड़ै ।।४५।।
खालसा सोइ मान जो तिआगै । खालसा सोइ जो परत्रीआ ते भागे ।।४६।।
खालसा सोइ परदृष्टि को तिआगै । खालसा सोइ नामरत लागै ।।४६।।
खालसा सोइ गुरबाणी हित लाइ । खालसा सोइ सार मुंहि खाइ ।।४८।।

दोहरा

ख़लक ख़ालिक की जाण के ख़लक दुखावे नाहि ।।
ख़लक दुखै नंद लाल जी ख़लिक कोपै ताहि ।।४९।।

चौपई

खालसा सोइ निरधन को पालै । खालसा सोइ दुष्ट को गालै ।।५०।।
खालसा सोइ नाम जप करै । खालसा सोइ मलेछ पर चढ़ै ।।५१।।
खालसा सोइ नाम सिउं जोड़े । खालसा सोइ बंधन को तोड़े ।।५२।।
खालसा सोइ जो चढ़े तुरंग । खालसा सोइ जो करे नित जंग ।।५३।।
खालसा सोइ बसतर को धारे । खालसा सोइ दुष्ट को मारे ।।५४।।

LASER TYPE SETTERS : **DIGITAL ART THE DESIGN STUDIO,**
C-115-B, TILAK VIHAR PH.: 5177431

१ੴ वाहिगुरू जी की फतहि । ।

सिख मिशनरी कालेज का उद्देश्य

हम सिख हैं।

इसलिए यह आवश्यक है कि हमें सिखी असूलों(नियमों) का पता हो, गुरबाणी के अर्थ भाव, सिख इतिहास की जानकारी, सिख रहित मर्यादा के असूल सिख फिलासफी, सिख सभ्यता की हर गुरसिख को जानकारी होनी अति आवश्यक है। यदि हमें इनका ज्ञान नहीं हो हम कैसे सिख कहला सकते हैं ? पाठ हम करते जा रहे हैं, पर यदि कोई हमसे गुरबाणी के किसी वाक्य का अर्थ पूछ ले और हम जवाब न दे सकें तो यह हमारे लिए कितनी शर्मनाक बात होगी। दस गुरु साहिबों एवं प्राचीन गुरसिखों के इतिहास की जानकारी होनी आवश्यक है, यदि हम अपना बेमिसाल इतिहास नहीं जानते तो हम कैसे दूसरे को बता सकेंगे कि हम कौन-सी विरासत के मालिक हैं। सिख रहत् मर्यादा के उसूल कौन-कौन से हैं, इस विषय पर हम आमतौर पर अज्ञानी हैं। घर में पाठ रखना हो या जीवन में कोई संस्कार करना हो, गुरमत क्या है, इसे जानने के लिए हमें ग्रंथी सिंघों या ज्ञानी व्यक्ति पर निर्भर होना पड़ता है। पर क्या सिख होते हुए ऐसे असूलों की जानकारी हमें स्वयं को होनी ज़रूरी नहीं ?

आज हम देखते हैं हमारे में जो कमज़ोरियां आ रही हें, उसका मुख्य कारण यही है कि हमने सिखी के बारे में ज्ञान प्राप्त करने की ज़िमेवारी नहीं समझी। यदि हमें गुरसिखी के असूलों का स्वयं ज्ञान हो तो हम अपने नौजवानों को जो अनजाने में दाड़ी व केशों की बेअदबी कर रहे हैं, नशे पी रहे हैं, देहधारी पाखंडी गुरूओं को मान रहे हैं, को गुरबाणी के उसूल दृढ़ करवा कर, खून से लिखा अपना बलिदानी इतिहास सुना कर सिख धर्म की ओर प्रेरित कर सकते हैं। जो नौजवान आज बागी हो रहे हैं तो इसमें उन बेचारों का क्या दोष ? दोष तो हमारा अपना है, हमारे प्रचारकों का है, हमारी अगवाई करने वालों का है जो ऐसे नौजवानों को सिख धर्म की ओर नहीं प्रेरित कर सकें।

आज ना तो सिखी हमें माता-पिता से, घर से ही मिल रही है (क्योंकि माता-पिता ही सिखी से दूर हो चुके हैं तथा मादा प्रस्ती में बुरी तरह उलझे हुए हैं) व ना ही सिखी 'खालसा' स्कूलों, कालेजों से ही मिल रही है, क्योंकि किसी स्कूल या कालेज को छोड़कर सिखी के संदेश देने का प्रबंध हम इनमें कर ही नहीं सके या किया ही

नहीं, जहां पहले खालसा, स्कूलों कालेजों में होता था। गुरद्वारों में से सिखी की सिक्षा मिलनी चाहिए थी क्योंकि गुरुद्वारे बने ही सिखी का प्रचार करने के लिए, पर आज गुरुद्वारों में फैली गुटबाजी, पार्टीबाजी गुरुद्वारे पर कब्जे की भूख, गोलक (गुरूद्वारे में चढ़ाए हुए धन) की लड़ाई, नौजवानों के मार्ग में बाधा बनी हुई है, जिस कारण वह गुरूद्वारों में हो रहे धर्म प्रचार को नहीं स्वीकारते। फिर जो प्रचारक हमने अपने धर्म स्थानों में लगा रखे हैं, उनमें से बहु-गिनती अनपढ़ हैं। यदि हमारे बहुत सारे प्रचारकों की, ना स्कूली शिक्षा हो, ना वह धर्म के क्षेत्र में पूरा ज्ञान रखते हों, ना हि उच्च महान् जीवन, ना ही प्रचार के लिए मिशनरी उत्साह हो तो फिर यह आशा कैसे रखी जा सकती है कि ऐसे प्रचारक नौजवान पीढ़ी पर अपने प्रचार का अच्छा प्रभाव डाल सकेंगे। सत्य तो यह है कि प्रचारकों का यह क्षेत्र केवल एकमात्र माया कमाने का एक साधन बना कर रख दिया गया है, व प्रचार का वास्तविक उद्देश्य अलोप होता जा रहा है।

जब हम दूसरे धर्मों ईसाई मत, इस्लाम मत आदि की ओर देखते हैं तो उनके प्रचारक व प्रचारक तैयार करने वाली संस्थाएं (अदारे) देख कर दंग रह जाते हैं कि कैसे उन्होंने ग्यारह सालों का लम्बा समय लगाकर लाखों कि गिनती में प्रचारक तैयार किए हैं व प्रचार के क्षेत्र में उन्हें पूरी तरह तैयार किया है। पर जब हम अपने प्रचारकों की ओर देखते हैं तो असहाय से होकर रह जाते हैं क्योंकि हमारे प्रबंधकों ने प्रचारकों की तैयारी के लिए कोई बड़े संगठित व योग्य मिशनरी कालेज नहीं खोला, जहां प्रचारकों को सिख धर्म की पूरी शिक्षा देकर तैयार करके प्रचार के क्षेत्र में भेजा जा सके। योग्य प्रचारकों की कमी कारण ही हमारा धर्म जो दुनिया का सबसे बढ़िया व आलमगीर धर्म है। जो हर देश, प्रदेश में, बिना किसी जात-पात, अमीर-गरीब, वर्ग भेद, रंग रूप आदि बिना भेदभाव प्रचार किया जा सकता है, संसार में तो क्या पंजाब में भी सही ढंग से नहीं प्रचार सका

उपरोक्त कमी को महसूस करते हुए 'सिख मिशनरी कालेज' आरम्भ किया गया है, जिस द्वारा 'दो साला सिख मिशनरी कोर्स (Correspondonce Course) करवाने का प्रबंध किया गया है। पढ़े-लिखे नौजवान, इस दो साला सिख मीशनरी कोर्स करने के बाद (Elementry Sikh Missionaries)के तौर पर कार्य करेगें। यह गुरमति प्रचारक अपनी कार्य करते हुए प्रचार का काम (Part time) में बिना किसी प्रकार की तनखाह फल आदि के करेंगे।